© 2022 IJNRD | Volume 7, Issue 12 December 2022 | ISSN: 2456-4184 | IJNRD.ORG

IJNRD.ORG ISSN : 2456-4184

INTERNATIONAL JOURNAL OF NOVEL RESEARCH AND DEVELOPMENT (IJNRD) | IJNRD.ORG

An International Open Access, Peer-reviewed, Refereed Journal

भारत में राष्ट्रपति चुनाव की राजनीति

डॉ. अशोक मूलवानी, सहायक आचार्य, राजनीति विज्ञान,
डॉ.भीमराव अम्बेडकर राजकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, निम्बाहेड़ा।

भारत में ब्रिटेन की तर्ज पर ही संसदात्मक शासन प्रणाली[1] को अपनाया गया है। राष्ट्रपति नाममात्र की कार्यपालिका और प्रधानमंत्री एवम् उसका मंत्रिमण्डल वास्तविक कार्यपालक हैं। औपचारिक प्रधान होने के कारण भारतीय संविधान में राष्ट्रपति को वास्तविक शक्तियां नहीं दी गई हैं, बावजूद इसके कि यह पद सत्ता और गरिमा से युक्त है, राष्ट्रपति देश का प्रथम नागरिक[2] है। राष्ट्रपति की स्थिति संवैधानिक अध्यक्ष की है, किंतु यह वह धुरी है, जो संकट के समय संवैधानिक तंत्र को संतुलित कर सकता है। यह आशंका आधारहीन नहीं है कि विषम आर्थिक और राजनीतिक परिस्थितियों में राष्ट्रपति सबसे महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकता है। सत्तारूढ़ दल इस तथ्य से परिचित है कि राष्ट्रपति एक तानाशाह के रूप में भी कार्य कर सकता है, इसलिए भारतीय राजनीतिक व्यवस्था में "आज्ञाकारी राष्ट्रपति" की अवधारणा का जन्म हुआ और सत्तारूढ़ दल और विपक्ष ने जब भी राष्ट्रपति का चुनाव किया, तो बहुत ही सोच–समझकर किया। सत्तारूढ़ दल सदा से अपनी पसंद के व्यक्ति को ही राष्ट्रपति के रूप में देखना चाहता रहा है। इस तरह संविधान निर्माताओं की इच्छा से इतर राष्ट्रपति चुनाव में दलगत राजनीति देखने को मिलती है और राष्ट्रपति का चुनाव दलगत राजनीति में उलझता हुआ नजर आता है। संविधान निर्माताओं की इच्छा थी कि राष्ट्रपति किसी ऐसे व्यक्ति को बनाया जाए, जो निष्पक्ष हो और उसके नाम पर सभी दलो के मध्य परस्पर सहमति हो। 1967 के चतुर्थ आम चुनावों[3] से लेकर आज तक राष्ट्रपति पद के प्रत्याशी का चयन बहुत सोच समझकर किया जाता रहा है, इसी कारण से अगर देखा जाए तो लोकतांत्रिक भारत में राष्ट्रपति चयनित होता है निर्वाचित नहीं। प्रधानमंत्री की इच्छा, मंशा, विचार एवं दलीय सोच व स्वार्थ की इस चयनित राजनीति में अहम् भूमिका होती है।

राष्ट्रपति का चयन इसलिए भी बहुत महत्वपूर्ण है, क्योंकि जब आम चुनावों के बाद लोकसभा में किसी भी दल को पूर्ण बहुमत नहीं मिलता और बड़े दल या गठबंधन के सबंध में स्थिति स्पष्ट नहीं हो तो राष्ट्रपति उस समय अपने विवेक का प्रयोग करता है। इसके अतिरिक्त कोई भी विधेयक तभी कानून बनता है, जब उस पर राष्ट्रपति अपने हस्ताक्षर कर देता है, राष्ट्रपति को पूर्ण, आंशिक और पॉकेट (जेबी) निषेधाधिकार का जो अधिकार मिला हुआ है, उससे वह व्यवस्थापिका की कानून बनाने की शक्ति को नियंत्रित कर सकता है। 44 वें संवैधानिक संशोधन[4] के अनुसार राष्ट्रपति को मंत्रिमंडल की सिफारिश को एक बार पुनर्विचार के लिए लौटाने का अधिकार होता है, सामान्यतया यह देखा गया है कि जब भी राष्ट्रपति ने किसी विधेयक या सिफारिश को पुनर्विचार के लिए लौटाया है, तो वह सिफारिश बहुत ही कम बार उसी रूप में लौटकर राष्ट्रपति के हस्ताक्षर हेतु प्रस्तुत हुई है। 31 जुलाई 2006 लाभ का पद[5] विधेयक को संसद ने उसी रूप में लौटाया था, जिस रूप में उसे राष्ट्रपति ने लौटाया था, बाद में 17 अगस्त, 2006 को राष्ट्रपति ने "लाभ का पद विधेयक" को हस्ताक्षरित किया।

भारतीय राष्ट्रपति को अनुच्छेद 85 (2)(ख) के तहत लोकसभा भंग करने एवं अनु. 352, 356 एवं 360 के तहत आपातकालीन शक्तियां[6] प्राप्त हैं, हालांकि वह मंत्रिमण्डल के परामर्शानुसार कार्य करता है,

लेकिन फिर भी वह भारतीय राजव्यवस्था में एक अहम् व्यक्ति का किरदार निभाता है। भारत में राष्ट्रपति का चुनाव होने से पूर्व यह देखा गया है कि राजनीतिक दल अपने मनपसंद व्यक्ति को राष्ट्रपति पद हेतु उम्मीदवार बनाकर चुनाव पूर्व ही उसका चयन सुनिश्चित कर देते हैं। ऐसा इसलिए संभव है, क्योंकि राष्ट्रपति के निर्वाचक मण्डल[7] में जो सदस्य होते हैं, उनके मतों का मूल्य निकालकर यह पता चल जाता है कि किस पक्ष का व्यक्ति राष्ट्रपति बनने वाला है। वर्तमान में स्थिति यह है कि जिस दल का संसद के दोनों सदनों एवं राज्यों की विधानसभाओं में बहुमत होता है, उसी दल का पसंदीदा उम्मीदवार राष्ट्रपति बनने में सफल हो पाता है, इसलिए राष्ट्रपति का चुनाव आज महज औपचारिकता बनकर रह गया है। इसलिए राष्ट्रपति पद हेतु सत्तारूढ़ दल व विपक्ष द्वारा उम्मीदवार का चयन और उस पर होने वाली राजनीति बहुत महत्वपूर्ण है, यह राजनीति बताती है कि देश की राजव्यवस्था किस दिशा में जाएगी और जा रही है। यह सत्य है कि राष्ट्रपति पद का चुनाव आज दलीय राजनीति से मुक्त नहीं है, इस पद हेतु निष्पक्षता अति आवश्यक है, ऐसा संविधान निर्माताओं का भी मानना था और आज इसकी आवश्यकता भी है। राष्ट्रपति चूंकि देश का पहला नागरिक है इसलिए यह संपूर्ण सदन का होना ही चाहिए, यह हास्यापद है कि इतना आवश्यक होने के बाद भी राष्ट्रपति सत्तारूढ़ दल की कठपुतली बनकर रह जाता है।

भारत का संविधान 26 जनवरी, 1950 को लागू हुआ[8] और डॉ. राजेन्द्र प्रसाद भारत के पहले राष्ट्रपति बने, लेकिन यह स्पष्ट था कि जब देश में आम चुनाव होगें, तो राष्ट्रपति पद के लिए भी चुनाव होगा, डॉ. राजेन्द्र प्रसाद का राजनीतिक कद और हैसियत इतनी बड़ी थी कि उनके अतिरिक्त किसी और का जीतना मुश्किल था। अप्रेल–मई 1952 में राष्ट्रपति पद हेतु चुनाव हुए और डॉ. राजेन्द्र प्रसाद निर्वाचित हुए, उन्हें 5,07,400 मत मूल्य प्राप्त हुआ, किंतु उनके विरूद्ध चार उम्मीदवार चुनाव में उतरे। के. टी. शाह[9] संविधान सभा में सदस्य रहे थे, इसके अतिरिक्त कृष्ण कुमार,[10] लक्ष्मण गणेश थाटे[11] एवं चौधरी हरिराम[12] अन्य उम्मीदवार थे। के. टी. शाह ने इस चुनाव में 15.3 फीसदी यानि 92,827 मत मूल्य प्राप्त किया, हिंदू महासभा से जुड़े गणेश लक्ष्मण थाटे को 2,672 मत मूल्य और चौधरी हरिराम को 1,954 मत मूल्य एवं 533 मत मूल्य कृष्ण कमार चटर्जी को प्राप्त हुए, डॉ. राजेन्द्र प्रसाद को के. टी. शाह से कड़ी टक्कर मिली थी।

इन चुनावों में वामपंथी दलों ने के. टी. शाह को उम्मीदवार बनाया था[13], वामपंथी दलों का मानना था कि राष्ट्रपति पद पर किसी निर्दलीय व्यक्ति को ही उम्मीदवार बनाया जाना चाहिए, जो कि निष्पक्ष रह सके और पार्टी की गतिविधियों से दूर रह सके, हालांकि डॉ. राजेन्द्र प्रसाद ने 1950 में राष्ट्रपति पद पर आसीन होते ही कह दिया था कि अब उनका कांग्रेस से कोई संबंध नहीं रहा है, जो उनकी राजनीतिक परिपक्वता का प्रतीक कहा जा सकता है। डॉ. प्रसाद को यह मालूम था कि राष्ट्रपति पद हेतु निष्पक्षता अति आवश्यक है और उन्हें निष्पक्ष दिखना भी था और बनना भी था। गौरतलब है कि भारत के राष्ट्रपति के पद पर डॉ. राजेन्द्र प्रसाद का 3 बार चयन हुआ। पहली बार 1950 में अंतरिम, दूसरी बार 1952 और तीसरी बार 1957 में राष्ट्रपति बनाए गए।[14]

प्रधानमंत्री जवाहर लाल नेहरू आधुनिक व धर्मनिरपेक्ष विचारों वाले सी. राजगोपालाचारी को अंतरिम राष्ट्रपति बनाना चाहते थे, उनका मानना था कि किसी दक्षिण भारतीय के राष्ट्रपति बनने से राष्ट्र में क्षेत्रीय संतुलन कायम होगा। नेहरू का यह भी विचार था कि सी. राजगोपालाचारी को गवर्नर जनरल के रूप में कार्य करने के कारण पर्याप्त प्रशासनिक व राजनीतिक अनुभव भी था और वे एक कूटनीतिज्ञ भी थे। दूसरी ओर सरदार पटेल संविधान निर्मात्री सभा के अध्यक्ष पद की स्थिति के प्रश्न पर प्रसाद के साथ उभरे मतभेद के बावजूद उनके पारम्परिक सांस्कृतिक विश्वासों से बहुत प्रभावित थे। सरदार पटेल का विचार था कि जब कभी नेहरू प्रगतिवादी व क्रांतिकारी नीतियों के मार्ग पर चलना चाहेगें, तो नियंत्रण व संतुलन के सिद्धांत से डॉ. प्रसाद के द्वारा उनको नियंत्रित कर लिया जाएगा।

मौलाना अबुल कलाम के सामंजस्यपूर्ण प्रयासों से अंततः डॉ. प्रसाद राष्ट्रपति पर निर्वाचित हुए

और नेहरू जी की इच्छाओं और विचारों की शिकस्त हुई।[15] राष्ट्रपति पद पर कौन बैठे? इस द्वंद्व की शुरूआत भारतीय राजनीतिक व्यवस्था में हो गई। एक कार्यपालक वास्तविक और एक कार्यपालक संवैधानिक रखने की सोच भारतीय संविधान निर्माताओं की यही थी कि वे जानते थे कि राजनीति में एक म्यान में दो तलवारें कभी नहीं रह सकती हैं। 1957 के लोकसभा चुनावों में जब कांग्रेस भारी बहुमत के साथ जीतकर सत्ता में आई, तो नेहरू की लोकप्रियता अपने चरम पर थी, राष्ट्रपति के पद हेतु नेहरू की पसंद डॉ. सर्वपल्ली राधाकृष्णन् थे, लेकिन इधर डॉ. प्रसाद ने दूसरी बार राष्ट्रपति बनने की इच्छा जाहिर कर दी थी, नेहरू के अतिरिक्त कांग्रेस के बहुसंख्यक सदस्य डॉ. राजेन्द्र प्रसाद को पुनः राष्ट्रपति के रूप में देखना चाहते थे, बावजूद इसके राजेन्द्र प्रसाद के नाम के संबंध में पार्टी में गतिरोध भी था, इसलिए नेहरू की इच्छा के विपरीत राजेन्द्र प्रसाद ने पुनः चुनाव लड़ा और राष्ट्रपति निर्वाचित हुए। राष्ट्रपति पद पर अपने पहले कार्यकाल के दौरान नेहरू व प्रसाद के बीच कई मुद्दों पर मतभेद थे[16], दोनों ही महान शख्सियत पार्टी में काफी लोकप्रिय थे। नेहरू राष्ट्रपति पद पर राधाकृष्णन् को आसीन करवाना चाहते थे, इसी मकसद से नेहरू जी ने राधाकृष्णन् को मास्कों में राजदूत के पद की जिम्मेदारी से हटाकर उप–राष्ट्रपति पद पर आसीन करवाया था, 1957 में नेहरू की पसंद वही थे और राधाकृष्णन् भी यही मानकर चल रहे थे कि उन्हें ही राष्ट्रपति बनाया जायेगा, लेकिन प्रसाद जी की महत्वाकांक्षा ने उनकी आशाओं पर पानी फेर दिया था।

जब नेहरू ने देखा कि कांग्रेस पार्टी का एक बड़ा तबका राधाकृष्णन के नाम पर सहमत नहीं है, तो मौलाना अबुल कलाम आजाद से विचार–विमर्श करने के बाद उन्होंने राधाकृष्णन् जी को राष्ट्रपति बनाने की जिद छोड़ दी और अनिच्छा से ही सही नेहरू प्रसाद जी के नाम पर सहमत हो गए, नाराज राधाकृष्णन् ने उप–राष्ट्रपति पद से इस्तीफा दे दिया, किंतु नेहरू ने उनको इस्तीफा वापिस लेने के लिए मना लिया। 1957 में राष्ट्रपति पद हेतु हुए निर्वाचन में दो निर्दलीय उम्मीदवारों ने भी अपने भाग्य को अजमाया और ये दो चौधरी हरीराम एवं नागेन्द्र नारायण दास थे। इन चुनावों में प्रसाद को निर्वाचक मण्डल के कुल मत मूल्य का 4,59,698 मत मूल्य, श्री हरिराम को 2,672 मतमूल्य एवं निर्दलीय श्री नागेंन्द्र नारायण दास जी को 2,000 मत मूल्य प्राप्त हुआ।[17]

1962 में एक बार पुनः राष्ट्रपति का चुनाव हुआ, इन चुनावों में नेहरू जी की इच्छा थी कि इस बार कम से कम किसी दक्षिण भारतीय को राष्ट्रपति पद पर आसीन किया जाना चाहिए और उप–राष्ट्रपति को ही राष्ट्रपति बनाए जाने की परम्परा की शुरूआत की जानी चाहिए। इस प्रकार शिक्षाविद् डॉ. सर्वपल्ली राधाकृष्णन् बिना किसी राजनीतिक पृष्ठभूमि के सत्ताधारी दल द्वारा भारत के **दूसरे** राष्ट्रपति बनाये गए। 1967 के वर्ष को भारतीय राजनीतिक व्यवस्था में महान् परिवर्तन विभाजक वर्ष के रूप में जाना जाता है, क्योकि इस वर्ष चौथे आम चुनाव के बाद राष्ट्रपति पद के उम्मीदवार का चयन एक गंभीर समस्या थी, 17 में से 8 राज्यों में गैर–कांग्रेसी सरकारें बनी थी, नेहरू की मृत्यु हो चुकी थी। केंद्र स्तर पर कांग्रेस की स्थिति कमजोर हुई थी, हालांकि राष्ट्रपति के निर्वाचक मण्डल में कांग्रेस का बहुमत अभी भी था, लेकिन उनकी स्थिति अभी कमजोर अवश्य हुई थी। राष्ट्रपति पद हेतु कांग्रेस द्वारा जाकिर हुसैन का नाम रखा गया, किंतु कांग्रेस कार्यसमिति के इस निर्णय से इंदिरा गांधी खुश नहीं थी, उनका मानना था कि बदलती हुई राजनीतिक परिस्थितियों में राष्ट्रपति उनके विश्वास का होना चाहिए। तत्कालीन कांग्रेस अध्यक्ष शिक्षाविद् सर्वपल्ली राधाकृष्णन् को पुनः राष्ट्रपति के रूप में देखना चाहते थे, कांग्रेस अध्यक्ष को यह अंदेशा था कि हिंदी भाषी निर्वाचक राज्य मुस्लिम समुदाय के जाकिर हुसैन को अपना वोट नहीं देगें, दूसरी तरफ विपक्ष ने न्यायाधीश के. सुब्बाराव को अपना उम्मीदवार घोषित कर दिया, जिससे कांग्रेस खेमे में हड़कंप मच गया, लेकिन जे. पी. नारायण और संयुक्त समाजवादी दल के अध्यक्ष एस. एम. जोशी ने जाकिर हुसैन को समर्थन देने की बात कही, जिससे जाकिर हुसैन की जीत तय हो गई और जाकिर हुसैन 13 प्रतिशत मतों के अंतर से चुनाव जीत गए, एक बार पुनः कांग्रेस समर्थित उम्मीदवार की ही जीत हुई और डॉ. जाकिर हुसैन भारत के **तीसरे** निर्वाचित राष्ट्रपति बने। भारतीय राजनीतिक व्यवस्था में यह परम्परा स्थापित हुई कि राष्ट्रपति सत्तारूढ़

दल का पसंदीदा व्यक्ति ही हो सकता है और यह पसंदीदा व्यक्ति केन्द्र का आज्ञाकारी व्यक्ति ही होगा।[18]

कुछ समय उपरांत राष्ट्रपति के असामयिक निधन[19] के पश्चात् जुलाई, 1969 में पुनः अगला राष्ट्रपति कौन होगा? का प्रश्न उठ खड़ा हुआ। एक बार फिर तत्कालीन परिस्थितियां विरोधाभासपूर्ण ही थीं और राष्ट्रपति के नाम पर सहमति बन पाना मुश्किल लग रहा था। इस संबंध में तत्कालीन कांग्रेस अध्यक्ष निजलिंगप्पा एवं प्रधानमंत्री इंदिरा जी के बीच सीधा टकराव उत्पन्न हुआ। राष्ट्रपति चयन के नाम पर कांग्रेस की आंतरिक खींचतान अपने चरम बिंदु पर पहुंच गई। इस काल में कांग्रेस अध्यक्ष और कांग्रेसी प्रधानमंत्री के बीच सीधे मतभेद स्पष्टतः दिखाई दे रहे थे। कांग्रेस संसदीय बोर्ड में इंदिरा जी ने अपनी ओर से बाबू जगजीवन राम का नाम रखा, इधर पार्टी अध्यक्ष निजलिंगप्पा ने नीलम संजीव रेड्डी के नाम पर अपनी सहमति व्यक्त की। अगला राष्ट्रपति कौन हो? के प्रश्न पर इंदिरा गांधी कांग्रेस संसदीय बोर्ड में अल्पमत की स्थिति में आ गईं। अंत में कांग्रेस संसदीय बोर्ड ने नीलम संजीव रेड्डी को पार्टी का अधिकृत उम्मीदवार बनाया। अब इंदिरा गांधी को अपने खिलाफ बगावत की बू आने लगी और उन्हें स्वयं को प्रधानमंत्री पद से हटाए जाने का भी डर सताने लगा।

नीलम संजीव रेड्डी के नाम की घोषणा होते ही कार्यवाहक राष्ट्रपति श्री वी. वी. गिरी ने राष्ट्रपति पद का चुनाव लड़ने की घोषणा कर दी। इधर विरोधी दलों ने डॉ. चिंतामणि देशमुख[20] को अपनी ओर से राष्ट्रपति पद का उम्मीदवार बनाया। राष्ट्रपति पद हेतु त्रिकोणात्मक संघर्ष देखने को मिला। अगर गौर करें तो भारतीय राजनीति में चौथे राष्ट्रपति का चुनाव एक रोमांचक मोड़ लेकर आया, जब वी. वी. गिरी ने एक निर्दलीय उम्मीदवार के रूप में चुनाव लड़ा। यह एक ऐसा समय था जब इंदिरा गांधी के नेतृत्व वाली कांग्रेस पार्टी में गहरे मतभेद उभरे। इन चुनावों में इंदिरा ने अपनी पार्टी के सदस्यों से अपील, कि वे मतदान के समय अपनी अंतरात्मा की आवाज से वोट डाले, इस अपील से राजनीतिक पारा अपने चरम पर पहुंच गया, कांग्रेस पार्टी दो खेमों में बंट गई। पार्टी के ओल्ड गार्ड के. कामराज, एस. निजलिंगप्पा, नीलम संजीव रेड्डी और मोरारजी देसाई जैसे सिंडीकेट ग्रुप के नेताओं से टकराव के चलते इस चुनाव के बाद इंदिरा गांधी को कांग्रेस की प्राथमिक सदस्यता से निलंबित कर दिया गया।[21]

1969 में राष्ट्रपति पद के लिए हुए इन चुनावों की खास बात यह थी कि चुनाव उपरांत वोटों की पहले चरण की गिनती के उपरांत जब किसी भी उम्मीदवार को स्पष्ट बहुमत नहीं मिला, तो द्वितीय वरीयता के वोटों[22] की गिनती हुई और कार्यवाहक राष्ट्रपति वी. वी. गिरी की जीत हुई। निर्दलीय वी. वी. गिरी ने कांग्रेस अधिकृत उम्मीदवार नीलम संजीव रेड्डी को पछाड़ते हुए जीत दर्ज की और श्री वराहगिरी वेंकट गिरी भारत के **चौथे** निर्वाचित राष्ट्रपति बने। यह चुनाव भारत के लोकतांत्रिक इतिहास में एक यादगार और रोमांचक घटना के रूप में दर्ज हो गया और वी. वी. गिरी निर्दलीय उम्मीदवार के रूप में और द्वितीय वरीयता के वोटों की गिनती के उपरांत जीतने वाले पहले और आखिरी उम्मीदवार बने।[23]

अपने 5 वर्ष के कार्यकाल में वी. वी. गिरी ने जनता का राष्ट्रपति बनने की कोशिश की थी, 02 मई से 27 मई 1974 तक 20 दिन रेलवे कर्मचारियों ने हड़ताल की, इस हड़ताल को दबाने के लिए पुलिस और अर्द्ध सैन्य बलों का उपयोग किया गया, कर्मचारियों को डराया गया और गिरफ्तार किया गया, वी.वी. गिरी की सहानुभूति रेलवे कर्मचारियों और मजदूरों के साथ थी। उन्होंने केन्द्र सरकार से हड़ताल को शक्ति व ताकत से ना दबाने की अपील की और माना कि रेलवे कर्मचारियों के हक और पक्ष को सुना जाए और न्याय किया जाए। राष्ट्रपति गिरी ने यदाकदा केन्द्र को नाराज करने वाले बयान भी दिए, जिसे इंदिरा ने पसंद नहीं किया, इंदिरा चाहती थी कि राष्ट्रपति मात्र संवैधानिक अध्यक्ष की भूमिका अदा करे न कि केन्द्र को क्या करना चाहिए? कैसे करना है? का उपदेश दे। 1974 के राष्ट्रपति चुनाव के समय इंदिरा को आशंका थी कि कहीं वी. वी. गिरी पुनः राष्ट्रपति का चुनाव लड़ने की घोषणा

न कर दे।[24]

1971 का चुनाव भारी बहुमत से जीतने के बाद कांग्रेस की सर्वेसर्वा इंदिरा गांधी हो गई थीं, इंदिरा ही कांग्रेस थी और कांग्रेस ही इंदिरा थी। देश की सत्ता पर इंदिरा गांधी की मजबूत पकड़ हो चुकी थी, 1974 में इंदिरा गांधी ने भारत के 5वें राष्ट्रपति के चुनाव हेतु असम के फखरूद्दीन अली अहमद को प्रत्याशी बनाया, तो यह तय था कि उनकी ही जीत होगी, क्योंकि इंदिरा की इच्छा के विपरीत जाने की हिम्मत किसी कांग्रेसी की नहीं थी, 01 जुलाई, 1974 को तत्कालीन कांग्रेस अध्यक्ष ने घोषित किया कि फखरूद्दीन अली अहमद को कांग्रेस संसदीय बोर्ड ने कांग्रेस का अधिकृत उम्मीदवार चुना है, इंदिरा की इच्छा पर कांग्रेस संसदीय बोर्ड ने अपनी मुहर लगा दी थी। कांग्रेस से अलग हुए पुराने सदस्य लगभग सभी पुनः इंदिरा की कांग्रेस में आ चुके थे। कांग्रेस के पुराने सिंडीकेट के नेता जो उनके सामने 1969 में उनके लिए परेशानी का सबब बने थे, हाशिए पर आ गए थे या पुनः पार्टी में शामिल हो गए थे।[25]

1974 का राष्ट्रपति चुनाव इस मायने में अनूठा था कि पहली बार राष्ट्रपति बनने की दौड़ में कोई निर्दलीय उम्मीदवार शामिल नहीं था। कांग्रेस की तरफ से फखरूद्दीन अली अहमद थे, तो वाम दलों ने बंगाल से आने वाले त्रिदिब चौधरी[26] को चुनाव मैदान में उतारा। चौधरी रिवॉल्यूशनरी सोशलिस्ट पार्टी से थे। वोटो की गिनती उपरांत चौधरी को 1,89,196 मूल्य मत तो फखरूद्दीन अली अहमद को 7,65,587 मत मूल्य प्राप्त हुए और एक बड़े अंतर से उनकी जीत हुई और भारत के **पांचवे** चयनित राष्ट्रपति बने। 26 जून, 1975 को इंदिरा के कहने पर फखरूद्दीन अली अहमद ने राष्ट्रीय आपातकाल की घोषणा की थी। इंदिरा गांधी द्वारा फखरूद्दीन अली अहमद को राष्ट्रपति बनाया गया, जिसके पीछे यह महत्वपूर्ण था कि वे उनके प्रति पूर्ण वफादार रहे थे। एक चर्चित समाचार पत्र ने अपने संपादकीय में लिखा कि श्री अहमद बहुत असरदार और अग्रणी नहीं है। इंदिरा गांधी जी को ऐसा उम्मीदवार चाहिए था, जो पदोन्नति की कृतज्ञता के बोझ से दबकर गुमसुम बैठा रहे और सरकारी कामकाज में दखल न दे।[27]

श्री अहमद को उम्मीदवार बनाए जाने के पीछे एक बड़ा हास्यास्पद तर्क दिया गया कि मुस्लिम राष्ट्रपति अपना 5 साल का कार्यकाल पूरा नहीं कर पाए, इसलिए पुनः किसी मुस्लिम को ही यह मौका दिया जाना चाहिए। इसके अतिरिक्त श्री फखरूद्दीन अली अहमद उत्तर–पूर्वी राज्य असम से थे, जिससे उत्तरपूर्व के राज्यों को देश का प्रतिनिधित्व करने का भी मौका मिल जाता। यहां सबसे महत्वपूर्ण बात यह है कि श्रीमति इंदिरा गांधी को "आज्ञाकारी राष्ट्रपति" की जरूरत थी। भारत के **पांचवे** राष्ट्रपति के चुनाव से कुछ महत्वपूर्ण तथ्य उभरकर सामने आए कि राष्ट्रपति को "आज्ञाकारी" होना चाहिए न कि स्वतंत्र विचारों वाला, राष्ट्रपति प्रधानमंत्री की पसंद का होना चाहिए और यदि ऐसा न होकर राष्ट्रपति सख्त, निष्पक्ष, स्वतंत्र छवि वाला हुआ, तो केन्द्र के लिए मुश्किलें खड़ी हो सकती हैं।[28]

भारत में आम चुनाव 10 फरवरी से 13 मई, 1977 तक चले, लेकिन इस बीच 11 फरवरी, 1977 को राष्ट्रपति फखरूद्दीन अली अहमद की अचानक मृत्यु[29] के कारण पुनः राष्ट्रपति चुनाव की आवश्यकता हुई। इधर जून–जुलाई 1977 में 11 राज्यों की विधानसभाओं के भी चुनाव हुए। संविधान के अनुच्छेद 65 (1) के तहत उप–राष्ट्रपति बी. डी. जत्ती ने कार्यवाहक राष्ट्रपति के रूप में कार्यभार संभाला। 1977 में घटकवादी जनता पार्टी सत्ता में आई, उनकी इच्छा थी कि ऐसे व्यक्ति को राष्ट्रपति बनाया जाना चाहिए, जिसे विपक्षी पार्टियां भी स्वीकार करें अर्थात् वह सर्वसम्मत व्यक्ति ही होना चाहिए। तत्कालीन प्रधानमंत्री मोरारजी देसाई ने विपक्षी नेता यशवंत राव चव्हाण से विचार किया और इधर कांग्रेस में भी राष्ट्रपति के नाम पर अमृत मंथन चलता रहा। सत्तारूढ़ दल और विपक्ष के राष्ट्रपति के नाम पर मंथन के परिणामस्वरूप नीलम संजीव रेड्डी, बाबू जगजीवन राम, मुहम्मद करीम, एस. हेगड़े, सिद्धराज ढढ्ढा, विजयलक्ष्मी पंडित, एम. हिदायतुल्ला और निजलिंगप्पा के नाम उभरकर सामने आए। जनसंघ की ओर से एम. हिदायतुल्ला का नाम आगे किया गया, मोरारजी देसाई ने श्रीमति रूकमणी देवी का नाम दिया,

गृहमंत्री चौधरी चरण सिंह ने दलित नेता बाबू जगजीवन राम का नाम रखा, उनका तर्क था कि किसी हरिजन को आज तक राष्ट्रपति के पद पर आसीन नहीं किया गया और इस नाम पर तो जनता पार्टी एवं स्वयं कांग्रेस को भी कोई आपत्ति नहीं होगी, क्योंकि महात्मा गांधी की भी ऐसी ही इच्छा रही थी।

इन सब से इतर जयप्रकाश प्रकाश नारायण ने भूमिगत आंदोलन के नायक श्री अच्युत पटवर्धन का नाम सुझाया। इन सब के बीच 7 जुलाई, 1977 को जनता पार्टी ने नीलम संजीव रेड्डी के नाम पर अपनी मुहर लगा दी। विपक्ष के नेता यशवंत राव चव्हाण ने भी नीलम संजीव रेड्डी के नाम पर अपनी सहमति व्यक्त की। मोरारजी देसाई ने भारतीय साम्यवादी पार्टी, अन्नाद्रमुक, क्रांतिकारी सोशलिस्ट पार्टी एवं मुस्लिम लीग से विचार–विमर्श कर नीलम संजीव रेड्डी के नाम पर आम सहमति बनवा ली, यह सहमति निर्विरोध राष्ट्रपति के चुनाव की दिशा में एक महत्वपूर्ण कदम था। इस बार के राष्ट्रपति चुनाव भारतीय राजनीतिक व्यवस्था में अत्यन्त महत्वपूर्ण थे, क्योंकि संविधान निर्माताओं की यह इच्छा थी राष्ट्रपति का चुनाव दलीय राजनीति से दूर रहे और राष्ट्रपति सर्वसम्मत व्यक्ति होना चाहिए। भारत के राष्ट्रपति चुनाव में पहली बार ऐसा अवसर आया था, जब राष्ट्रपति का चुनाव बिना शोर–शराबे के सर्वसम्मति से हुआ। अंततः श्री नीलम संजीव रेड्डी भारत के **छठे** राष्ट्रपति बने।[30]

1982 में भारत के **सातवें** राष्ट्रपति का चुनाव हुआ, पिछले राष्ट्रपति चुनाव से यह आम राय कायम हुई थी, कि राष्ट्रपति का चुनाव आम सहमति से होना चाहिए, विपक्ष ने सत्तारूढ़ दल से अनुरोध भी किया कि कांग्रेस सर्वसम्मत राष्ट्रपति चुनाव हेतु किसी ऐसे उम्मीदवार का नाम रखे, जिस पर आम सहमति स्थापित हो सके, लेकिन सत्तारूढ़ दल ने विपक्ष को विश्वास में लिए बिना ही तत्कालीन गृहमंत्री ज्ञानी जैल सिंह को राष्ट्रपति पद हेतु कांग्रेस समर्थित उम्मीदवार घोषित कर दिया। प्रत्युतर में 9 विपक्षी दलों द्वारा सर्वोच्च न्यायालय के भूतपूर्व न्यायाधीश श्री हंसराज खन्ना[31] को उम्मीदवार बनाया गया। जस्टिस खन्ना वही शख्स थे, जिन्होंने आपातकाल के दौरान इंदिरा गांधी से सीधे टकराव मोल लिया था। ज्ञानी जैल सिंह राष्ट्रपति पद के लिए उम्मीदवार के रूप में चयनित हुए, इसका कारण खालिस्तान आंदोलन से उत्पन्न स्थिति और श्रीमति इंदिरा गांधी के प्रति उनकी पूर्ण निष्ठा और वफादारी थी। 1982 का भारत के राष्ट्रपति का चुनाव चर्चा में रहा, क्योकि ज्ञानी जैल सिंह ने एक ऐसा बयान दिया था, जो चर्चा का विषय बन गया। 1980 में जब इंदिरा गांधी पुनः सत्ता में लौटी, तो वे कहीं ज्यादा ताकतवार बन चुकी थीं, उन्होंने राजीव गांधी को कांग्रेस महासचिव के पद पर आसीन करवाया।

इंदिरा गांधी ने राजीव गांधी को राष्ट्रपति पद हेतु उम्मीदवारों की एक लिस्ट बनाने को कहा, जो सूची राजीव गांधी ने बनाई, उसमें एक नाम पर कांग्रेस महासचिव राजीव गांधी और इंदिरा गांधी दोनों सहमत थे और वह नाम था ज्ञानी जैल सिंह का। जब ज्ञानी जैल सिंह को कांग्रेस का अधिकृत उम्मीदवार बनाया गया, तब ज्ञानी जैल सिंह ने यह कहा कि अगर प्रधानमंत्री इंदिरा जी मुझे झाड़ू देकर सफाई करने के लिए भी कहें, तो मैं पीछे नहीं हटूंगा, बल्कि उनके आदेश की पालना करूंगा। उनका यह वक्तव्य विवाद का विषय बन गया, विपक्ष ने उनकी आलोचना करते हुए कहा कि राष्ट्रपति जो संवैधानिक अध्यक्ष मात्र है, उसके लिए ऐसा बयान देना संविधान के प्रति उनकी निष्ठा पर सवाल खड़ा करता है। इस बयान पर राजनीतिक बवाल के बाद ज्ञानी जैल सिंह ने कोई अफसोस जाहिर नहीं किया और न ही अपनी कोई सफाई दी। 12 जुलाई, 1982 को राष्ट्रपति चुनाव के लिए वोटिंग हुई, उन्हें निर्वाचक मण्डल के कुल मत मूल्य का 7,54,113 मत मूल्य प्राप्त हुआ, जबकि विपक्षी उम्मीदवार श्री हंसराज को 2,82,685 मत मूल्य प्राप्त हुआ। ज्ञानी जैल सिंह भारत के **सातवें** चयनित राष्ट्रपति बने[32] और इंदिरा जी के आज्ञाकारी राष्ट्रपति कहलाए।

जब 1984 में इंदिरा गांधी के अंगरक्षकों सतवंत सिंह और केहर सिंह ने इंदिरा गांधी की गोली मारकर हत्या कर दी,[33] तो प्रधानमंत्री की कुर्सी खाली हो गई थी, जनता की सहानुभूति राजीव गांधी के साथ थी, इस अवसर पर प्रधानमंत्री पद हेतु कई दिग्गजों की दावेदारी के बावजूद ज्ञानी जैल सिंह ने यह सुनिश्चित किया कि राजीव गांधी प्रधानमंत्री बनें और उन्होंने राजीव गांधी को ही प्रधानमंत्री पद हेतु

आमंत्रित किया। ज्ञानी जैल सिंह की निष्ठा पूर्णतः इंदिरा गांधी व उनके परिवार के प्रति थी, उन्होंने राष्ट्रपति पद पर निष्पक्ष ढंग से कार्य किया, जिसके कारण प्रधानमंत्री के साथ उनके संबंध खराब हुए। प्रधानमंत्री और राष्ट्रपति के बीच रिश्ते इतने बिगड़ गए कि वे सरकार को बर्खास्त तक करने की सोचने लगे, बहुत सी सरकारी कामकाज की फाइलों को उन्होंने अपने हस्ताक्षर के बिना लौटा दिया और यह दिखाया कि दायरे के भीतर रहकर भी उनके अधिकार क्या है? और वे कितने शक्तिशाली हैं, और वे किस तरह से सरकार को नियंत्रित कर सकते हैं? डाकघर संशोधन बिल पर उन्होंने जेबी निषेधाधिकार का प्रयोग कर इस बिल पर अपना विरोध दर्ज कराया। अपने कार्यकाल के अंतिम समय में राजीव गांधी व ज्ञानी जैल सिंह के सबंध इतने खराब हुए कि दोनों के बीच संवाद भी पूर्णतः बंद हो गया, लेकिन राष्ट्रपति ज्ञानी जैल सिंह की संविधान के प्रति आस्था बरकरार रही। राष्ट्रपति अगर चाहे तो संविधान के दायरे में रहकर भी सरकार को सही गलत का आईना दिखा सकता है।[34]

13 जुलाई, 1987 को देश के **8वें** राष्ट्रपति का निर्वाचन[35] संपन्न हुआ था, इन चुनावों में चुनावी मुकाबला आर. वेंकटरमण, कृष्ण अय्यर, मिथिलेश कुमार सिन्हा के बीच हुआ। चुनाव में असली मुकाबला आर. वेंकटरमण व कृष्ण अय्यर के बीच हुआ। आर. वेंकटरमण वो व्यक्ति थे, जिन्होंने भारतीय मिसाइल प्रोग्राम शुरू करवाया था, ए. पी. जे. अब्दुल कलाम को उसका प्रमुख बनाया था। भारत की पहली गठबंधन सरकार आर. वेंकटरमण के शासनकाल में बनी, इतना ही नहीं उनके 5 साल के कार्यकाल में सबसे ज्यादा सियासी उठापटक हुआ, लोकसभा में सरकारें बनती गिरती रहीं। ज्ञानी जैल सिंह के विपरीत आर. वेंकटरमण विवादों से दूर रहने वाले व्यक्ति थे। साम्यवादियों की पहल पर कृष्ण अय्यर को विपक्षी दलों ने अपना उम्मीदरवार बनाया। बीजेपी ने राष्ट्रपति चुनाव की प्रक्रिया में भाग नहीं लिया, वह चाहती थी कि कांग्रेस की परस्पर फूट का विपक्ष लाभ उठाकर ज्ञानी जैल सिंह को अपना उम्मीदवार बनाए, परन्तु मार्क्सवादी इससे सहमत नहीं थे। कृष्ण अय्यर वामपंथी विचारों के थे और भाजपा उस समय वामपंथियों के विरूद्ध थी। वेंकटरमण ज्ञानी जैल सिंह से भिन्न विचारों के थे, उनको लम्बा प्रशासनिक अनुभव था और उप–राष्ट्रपति के रूप में उन्होंने एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाई थी।

राजीव गांधी वेंकटरमण के पक्षधर थे, उनका मानना था कि वेंकटरमण संवैधानिक अध्यक्ष की भूमिका निष्पक्ष रूप से निभाएंगें और भारतीय राजव्यवस्था के दो महत्वपूर्ण स्तंभों के मध्य अब विवाद उत्पन्न नहीं होगा, इसलिए आर. वेंकटरमण को कांग्रेस ने अपना उम्मीदवार बनाया। 3 गैर–कांग्रेसी राज्यों में भी वेंकटरमण को बहुमत मिला। 25 जुलाई 1987 को उन्होंने भारत के **आठवें** राष्ट्रपति पद की शपथ ली। इन चुनावों से यह बात पूर्णतः स्पष्ट हो गई कि राष्ट्रपति तभी स्वीकार्य होगा, जब वह संवैधानिक अध्यक्ष की भूमिका निभायेगा, अन्यथा उसे दूसरी बार राष्ट्रपति नहीं बनाया जाएगा। डॉ. राजेन्द्र प्रसाद के अलावा दूसरी बार किसी राष्ट्रपति को दूसरे कार्यकाल के लिए नहीं चुना गया है। शायद इसलिए कि केन्द्र या सत्तारूढ़ दल इस बात से भयभीत हैं कि दूसरा कार्यकाल कहीं उसे स्वतंत्र विचारों वाला निरकुंश राष्ट्रपति ना बना दे। इस समय "आज्ञाकारी राष्ट्रपति" की अवधारणा का भी पुनर्जन्म हुआ और उप–राष्ट्रपति को राष्ट्रपति बनाए जाने की परम्परा की आवश्यकता महसूस की गई।[36]

9 वें राष्ट्रपति के चुनाव[37] ने एक नई सौदेबाजी की राजनीति को जन्म दिया और इन चुनावों में जाति का भी प्रवेश हो गया। राष्ट्रपति चुनाव में गंदी दलगत राजनीति देखी गई और महत्वाकांक्षाओं की अंतहीन पराकाष्ठा ने पैर पसार लिए थे। 13 जुलाई, 1992 को भारत के नए राष्ट्रपति का निर्वाचन हुआ, इस चुनाव में 4 प्रत्याशी चुनाव में उतरे, डॉ. शंकरदयाल शर्मा और जी. जी. स्वेल प्रमुख प्रतिद्वंद्वी थे। डॉ. शर्मा विधायक, सांसद, केन्द्रीय मंत्री, मुख्यमंत्री, पार्टी के राष्ट्रीय अध्यक्ष, राज्यपाल और उप–राष्ट्रपति से राष्ट्रपति पद पर पहुंचे थे। डॉ. शर्मा गांधी परिवार के इतने विश्वासपात्र थे कि राजीव गांधी की हत्या[38] के बाद सोनिया गांधी ने उनको कांग्रेस अध्यक्ष व प्रधानमंत्री बनने का प्रस्ताव किया। अगर डॉ. शर्मा ने सोनिया गांधी का प्रस्ताव स्वीकार किया होता, तो पी. वी. नरसिम्हा राव की जगह वे भारत के प्रधानमंत्री बन जाते, लेकिन उन्होंने इस प्रस्ताव को नकार दिया, 1991 में प्रधानमंत्री पद की पेशकश ठुकराने वाले शंकरदयाल शर्मा 1992 में कांग्रेस के राष्ट्रपति पद हेतु अधिकृत उम्मीदवार बनाए गए और भारत के राष्ट्रपति बने।[39] राष्ट्रपति पद के प्रत्याशी के चुनाव के संबंध में प्रधानमंत्री पी. वी. नरसिम्हा

राव ने विरोधी दलों को शंकर दयाल शर्मा के नाम पर मनाने की अधूरी कोशिश की, उन्होंने डॉ. शर्मा के नाम पर विरोधी दलों से बातचीत की, लेकिन उनके नाम की घोषणा के समय उन्हें कांग्रेस का प्रत्याशी बताया। मार्क्सवादी कम्युनिस्ट पार्टी व भाजपा डॉ. शर्मा के नाम पर सहमत तो थे, किंतु वे उप–राष्ट्रपति पद के संबंध में कांग्रेस के साथ सौदे–बाजी करना चाहते थे। विपक्ष के नेता लालकृष्ण अडवाणी ने त्रिसूत्रीय फार्मूला प्रस्तुत किया, जिसमें उन्होंने कहा कि राष्ट्रपति और उप–राष्ट्रपति पद हेतु नाम एक साथ तय किए जाने चाहिए और एक पद विपक्ष को दिया जाना चाहिए। आडवाणी का सौदेबाजी से भरा फार्मूला युक्तिसंगत तो था, किंतु सत्तारूढ़ कांग्रेस के लिए इसे पचा पाना कठिन था। कांग्रेस की सरकार एक अल्पमतीय सरकार थी उसे लोकसभा में 244 स्थान ही प्राप्त थे। उसका राष्ट्रपति के निर्वाचक मण्डल में बहुमत नहीं था। अंततः सत्तारूढ़ कांग्रेस ने बिना किसी सहमति के डॉ. शंकर दयाल शर्मा को कांग्रेस अधिकृत उम्मीदवार घोषित कर दिया, तो दूसरी ओर विपक्षी पार्टियां मेघालय के वनवासी नेता जी. जी. स्वेल की उम्मीदवारी पर परस्पर उलझी हुई थीं। भाजपाध्यक्ष मुरली मनोहर जोशी ने डॉ. शर्मा की उम्मीदवारी की घोषणा के संबंध में कहा कि यह विपक्ष को विश्वास में लिए बिना आमसहमति की धारणा के विपरीत एवं आम सहमति की धारणा को समाप्त करने के समान है।

राष्ट्रीय मोर्चे के कार्यकारी अध्यक्ष एन. टी. रामाराव ने इसे विपक्ष का अपमान बताया। विश्वनाथ प्रताप सिंह ने किसी हरिजन या आदिवासी वनवासी को राष्ट्रपति बनाये जाने की बात की, इस घोषणा से राष्ट्रपति चुनाव में जाति की राजनीति का भी प्रवेश हो गया। विपक्ष द्वारा घोषित उम्मीदवार जी. जी. स्वेल के नाम पर भाजपा ने भी अपनी सहमति व्यक्त की। मार्क्सवादी कम्युनिस्ट पार्टी ने डॉ. शर्मा को अपना समर्थन दिया। राष्ट्रपति के चुनाव के समय यह बात पर्दे के पीछे से निकल कर आई कि मार्क्सवादी कम्युनिस्ट पार्टी डॉ. शर्मा के नाम पर इसलिए सहमत हुई, क्योंकि तत्कालीन प्रधानमंत्री पी. वी. नरसिम्हा राव ज्योति बसु के साथ हुए समझौते के बाद इस बात पर सहमत हुए कि के. आर. नारायणन को उप–राष्ट्रपति बनाया जाएगा। विपक्ष की आपसी फूट राष्ट्रपति चुनाव में उनके उम्मीदवार जी. जी. स्वेल की पराजय का कारण बनी। इस चुनाव से राष्ट्रपति का चुनाव संवैधानिक भावना के विपरीत दलीय दलदल में उलझता दिखाई दिया। 25 जुलाई 1992 को डॉ. शंकर दयाल शर्मा ने भारत के 9वें राष्ट्रपति की शपथ ले ली।

के. आर. नारायणन 1997 में देश के पहले दलित राष्ट्रपति चुने गए थे। नारायणन को निर्वाचक मण्डल के 95 प्रतिशत वोट प्राप्त हुए, उन्हें कुल 9,56,290 मत मूल्य प्राप्त हुआ और वे देश के **10वें** राष्ट्रपति बने। नारायणन को सत्ताधारी संयुक्त मोर्चे, कांग्रेस और भारतीय जनता पार्टी का भी समर्थन प्राप्त था। साल 1997 में जब तत्कालीन राष्ट्रपति शंकर दयाल शर्मा का कार्यकाल समाप्त होने वाला था, तब सवाल यह था कि अब अगला राष्ट्रपति कौन बनेगा? उस समय उप–राष्ट्रपति के. आर. नारायणन को लेकर यह माना जा रहा था कि उन्हें ही अगला राष्ट्रपति बनाया जाएगा। कांग्रेस कार्यसमिति ने सीताराम केसरी को राष्ट्रपति पद हेतु नाम ढूंढने की जिम्मेदारी दी।

बीजेपी की ओर से यह जिम्मेदारी अटल बिहारी वाजपेयी को दी गई, दूसरी तरफ सीताराम केसरी और संयुक्त मोर्चे के संयोजक एन. चंद्रबाबू नायडू ने उच्चस्तरीय बैठक कर के. आर. नारायणन के नाम पर सहमति व्यक्त की। इसके बाद बीजेपी ने भी के. आर. नारायणन का समर्थन करने का निश्चय किया, लेकिन विश्व हिंदू परिषद् अध्यक्ष अशोक सिंघल ने नारायणन को दलित के स्थान पर क्रिश्चयन बताया। नारायणन् के इकलौते प्रतिद्वंदी पूर्व मुख्य निर्वाचन आयुक्त टी. एन. शेषन थे, जिनकी जमानत जब्त हो गई, उन्हें निर्वाचक मण्डल के कुल मतों के मूल्य का 50,631 मत मूल्य प्राप्त हुआ, शिवसेना और कुछ निर्दलियों ने ही उनका समर्थन किया था।[40] इन चुनावों में सत्तारूढ़ दल द्वारा आम सहमति बनाने की कोई कोशिश नहीं की गई, कांग्रेस और संयुक्त मोर्चे के निर्वाचक मण्डल में 65 प्रतिशत मत थे, इसलिए सर्वसम्मति एवं आमसहमति हेतु भारतीय जनता पार्टी से विचार विमर्श नहीं

किया गया।

11वें राष्ट्रपति ए. पी. जे. अब्दुल कलाम को जनता के राष्ट्रपति के रूप मे जाना जाता है, राष्ट्रीय जनतांत्रिक गठबंधन ने उन्हें 2002 में राष्ट्रपति पद के लिए नामित किया। मुख्य विपक्षी दल कांग्रेस, अन्नाद्रमुक, बीएसपी, समाजवादी पार्टी आदि ने भी कलाम के नाम पर अपनी सहमति व्यक्त की। वामपंथी दलों ने वयोवृद्ध स्वतंत्रता सेनानी कैप्टन लक्ष्मी सहगल को अपना उम्मीदवार बनाया, वामदलों का निर्वाचक मण्डल में बहुमत नहीं होने के कारण डॉ. कलाम की जीत पक्की थी। इन चुनावों में कलाम को निर्वाचक मण्डल के कुल मत मूल्यों में से 9,22,884 मत मूल्य प्राप्त हुआ, जबकि कैप्टन लक्ष्मी सहगल को कुल मत मूल्य का 1,07,366 मत मूल्य प्राप्त हुआ। कलाम साहब को राष्ट्रपति बनाने के पीछे एनडीए का उद्देश्य दक्षिण की राजनीति को साधने का था, साथ ही मुस्लिम समाज को यह संदेश भी देना था कि भाजपा मुस्लिमों की अनदेखी नहीं करती, वह उनके खिलाफ नहीं है, बल्कि एक सर्वोच्च संवैधानिक पद पर वह किसी मुस्लिम को आसीन करवाना चाहती है।[41]

एनडीए के लिए ए.पी.जे अब्दुल कलाम को चुनना इतना आसान नहीं रहा, नाम चयन में जितनी माथा पच्ची देखने को मिली, जो राजनीतिक चालें, दांव–पेंच देखने को मिले, वो शायद इससे पहले देखने को न मिले हों। दरअसल वाजपेयी जी नहीं चाहते थे कि के. आर. नारायणन दुबारा राष्ट्रपति बनें, क्योंकि नारायणन ने वाजपेयी सरकार (यूपी, बिहार में राष्ट्रपति शासन लगाने का प्रश्न) को कई मौकों पर मुश्किलों में डाला था, इसलिए वाजपेयी जी के मन में कुछ नाराजगी अवश्य थी, इसलिए वे उनके नाम पर सहमत नहीं थे। इधर आरंभ से कांग्रेस नारायणन के दूसरे कार्यकाल पर या उपराष्ट्रपति कृष्णकांत के प्रमोशन के पक्ष में नजर आ रही थी और सतही तौर पर एनडीए की ओर से महाराष्ट्र के तत्कालीन राज्यपाल पी.सी. एलेक्जेंडर का नाम तय माना जा रहा था। इस समय निर्वाचक मण्डल के 55 प्रतिशत वोट एनडीए के पक्ष में नजर आ रहे थे। वाजपेयी आडवाणी यह बिल्कुल नहीं चाहते थे, अगला राष्ट्रपति वामपंथी–कांग्रेसी संस्कृति में डूबा हुआ हो।

वाजपेयी, आडवाणी, एनडीए संयोजक जॉर्ज फर्नांडीस, विदेश मंत्री जसवंत सिंह, प्रमोद महाजन और ग्रामीण विकास मंत्री एम. वेंकैया नायडू की संयुक्त समिति का उत्तरदायित्व था कि वे राष्ट्रपति चुनाव हेतु उम्मीदवार का नाम चुने, इस हेतु प्रथम बैठक 5 जून, 2002 को हुई, इस बैठक में तीन नाम क्रमशः पी.सी. अलेक्जेण्डर, बाल ठाकरे, एनसीपी अध्यक्ष शरद पंवार सामने आया। पी.सी. एलेक्जेण्डर के नाम पर आम सहमति बन जाती, लेकिन इसके लिए जरूरी था कि विपक्ष से बातचीत कर उसे विश्वास में लिया जाता। 6 जून, 2002 को आंध्र प्रदेश के मुख्यमंत्री और एनडीए के घटक एम. चंद्रबाबू नायडू ने उप–राष्ट्रपति कृष्णकांत के नाम पर अपनी सहमति व्यक्त की, चंद्रबाबू ने कहा कि अगर पी.सी. एलेक्जेण्डर का नाम आगे किया जाता है, तो उप–राष्ट्रपति कृष्णकांत को दूसरा कार्यकाल दिया जाए और उनसे पूछे बिना किसी भी नाम को आगे न बढ़ाया जाए, इस तरह प्रमुख घटक दल तेलगू देशम् पार्टी के चंद्रबाबू ने एनडीए के लिए मामला फंसा दिया और उन्होंने एलेक्जेण्डर के नाम पर सौदेबाजी की राजनीति की।

इस स्थिति में जॉर्ज फर्नांडीस को एनडीए के सहयोगियों का पक्ष जानने के लिए भेजा गया, कृष्णकांत के नाम पर कोई सहमत नहीं था, राष्ट्रपति पद के उम्मीदवार चयन के प्रश्न पर शिवसेना ने तो एनडीए से अलग होने तक की घोषणा कर दी थी। एलेक्जेण्डर के नाम पर सबसे ज्यादा आपत्ति एम. चंद्रबाबू नायडू को थी, उन्हें 7 जून, 2022 को सभी प्रमुख नेताओं ने मनाने की कोशिश की, परन्तु वे टस से मस नहीं हुए, एनडीए नायडू की नाराजगी नहीं चाहता था। वाजपेयी कृष्णकांत के नाम पर सहमत नहीं थे, क्योंकि वाजपेयी जी उन्हें थर्डफ्रंट का नेता मानते थे, उनके राष्ट्रपति बनने से तीसरे मोर्चे की जीत हो जाती, जो वाजपेयी जी को मंजूर नहीं थी। इधर पीपुल्स फ्रंट और कांग्रेस ने के. आर. नारायणन से संपर्क साधा, क्योंकि कांग्रेसियों को यह लग रहा था कि के. आर. नारायणन पुनः राष्ट्रपति चुनाव लड़ना चाहेगें।

8 जून, 2022 की शाम को लालकृष्ण आडवाणी जी के आवास पर जॉर्ज फर्नांडीस, प्रमोद महाजन एवं वैंकेया नायडू के बीच ए.पी.जे. अब्दुल कलाम के नाम पर सहमति बनी, इन चारों ने ही कलाम जी का नाम वाजपेयी जी के सामने रखा और यह बताया कि ए.पी.जे. अब्दुल कलाम ही वे व्यक्ति हो सकते हैं, जिस पर विपक्ष को भी ऐतराज नहीं हो सकता। वाजपेयी जी ने कलाम का नाम चंद्रबाबू नायडू के सामने रखा, पर नायडू का मन कलाम के नाम पर सहमत नहीं था। आखिरकार नायडू जी हैदराबाद से दिल्ली आए और कलाम के नाम पर सहमति बनी और कृष्णकांत को राष्ट्रपति बनाने या उपराष्ट्रपति के रूप में उनका दूसरा कार्यकाल हो उसकी जिद्द उन्होंने खुद ही छोड़ दी।

याद रहे कि ममता बनर्जी ने ही कलाम का नाम आगे किया था। विपक्षी मुलायम सिंह यादव ने सबसे पहले कलाम का समर्थन किया, इस घोषणा से विपक्ष की किसी नए उम्मीदवार को आगे लाने की कोशिशें ध्वस्त हो गईं। शरद पंवार की एनसीपी ने भी कलाम के नाम का समर्थन करने की घोषणा की, इधर के. आर. नारायणन ने कलाम की जीत का खेल समझकर विपक्ष को चुनाव लड़ने से इंकार कर दिया, कृष्णकांत को आगे करने का अब कोई मतलब नहीं था, विपक्ष को यह बात समझ आ चुकी थी। सोनिया जी को अब भी भरोसा था कि एनडीए आखिरी वक्त में एजेक्जेण्डर का नाम आगे कर देगी, लेकिन ऐसा हुआ नहीं और विपक्ष की फूट उभरकर सामने आई, वामपंथियों ने कलाम को पसंद नहीं किया, इसलिए उन्होंने कैप्टन लक्ष्मी सहगल को अपना उम्मीदवार घोषित कर दिया। अंत में बीएसपी और अन्नाद्रुमुक भी कलाम के पक्ष में चले गए, इनका परिणाम कलाम की भारी जीत के रूप में देखने को मिलता है। विपक्ष यहां चाहकर भी कुछ भी नहीं कर पाया और कलाम भारत के **11 वें** राष्ट्रपति बन ही गए।[42]

2007 में भारत को **12वें** राष्ट्रपति के रूप में पहली महिला राष्ट्रपति मिलीं। तब कांग्रेस व लेफ्ट पार्टियों के समर्थन से प्रतिभा देवी सिंह पाटिल ने भाजपा उम्मीदवार भैरोसिंह शेखावत को हराया था, पाटिल को निर्वाचक मण्डल के कुल मत मूल्य का 6,38,116 मत मूल्य तो भैरोसिंह शेखावत को 3,31,306 मत मूल्य प्राप्त हुआ। इस चुनाव में भाजपा की सहयोगिनी शिवसेना ने प्रतिभा पाटिल को अपना समर्थन दिया।[43] राजस्थान की राज्यपाल प्रतिभा देवी सिंह पाटिल संयुक्त प्रगतिशील गठबंधन और वामपंथी दलों की साझा उम्मीदवार बनाई गईं। तमिलनाडु के मुख्यमंत्री और डीएमके नेता एम. करूणानिधि ने वामपंथी दलों और यूपीए के बीच सहमति बनाने में मुख्य भूमिका निभाई। वामपंथी दलों ने शिवराज पाटिल और कर्ण सिंह की दावेदारी का विरोध किया, जिसके परिणामस्वरूप मार्गरेट अल्वा और प्रतिभा पाटिल का नाम सामने आया और प्रतिभा देवी सिंह पाटिल के नाम पर सहमति बनी। उन्हें तीन साल पहले राजस्थान का राज्यपाल भी बनाया गया था।[44]

भाजपा की सबसे पुरानी सहयोगी शिवसेना ने राष्ट्रपति चुनाव में प्रतिद्वंद्वी संयुक्त प्रगतिशील गठबंधन की उम्मीदवार प्रतिभा पाटिल को समर्थन दिया। प्रतिभा पाटिल के मराठी होने के कारण शिवसेना प्रमुख बाल ठाकरे ने प्रतिभा पाटिल के समर्थन का फैसला किया। उन्होंने यह कहा कि यह एक अच्छा संकेत है कि देश की पहली महिला राष्ट्रपति महाराष्ट्र से होगीं, यह महाराष्ट्र का सौभाग्य है कि एक मराठी महिला पहली बार राष्ट्रपति बनने जा रही थीं। शिवसेना ने अपने स्थापना दिवस 19 जून, 2007 को प्रतिभा को समर्थन देने का ऐलान करना था, लेकिन उस दिन ऐसा संभव नहीं हो पाया। निर्वाचक मण्डल में उस समय शिवसेना का मत मूल्य 22,950 था। शिवसेना ने अपने मुखपत्र 'सामना' में कहा था, मराठी मूल की प्रतिभा पाटिल को राष्ट्रपति पद का उम्मीदवार बनाया जाना गर्व की बात है। इधर प्रतिभा देवी सिंह पाटिल का संबंध राजस्थान के सीकर जिले के लोसल छोटी गांव से भी रहा, उनके पति श्री देवीसिंह रणसिंह शेखावत के पूर्वज इसी स्थान से संबंध रखते थे, बाद में वे महाराष्ट्र चले गए थे। इस तरह राजस्थान के सांसदों व विधायकों से भी उनकों समर्थन मिलने की उम्मीद थी। एपीजे अब्दुल कलाम के राष्ट्रपति चुनाव लड़ने से इंकार करने के बाद मुकाबला शेखावत व पाटिल के मध्य रह गया था।[45]

25 जुलाई 2012 को प्रतिभा पाटिल का कार्यकाल समाप्त होने के बाद **13वें** राष्ट्रपति के चुनाव का प्रश्न उठा, निर्वाचक मण्डल के कुल मतों का मत मूल्य 10,98,882 था और संयुक्त प्रगतिशील गठबंधन की सरकार केन्द्र में थी, यूपीए का निर्वाचक मण्डल में 41.87 प्रतिशत का हिस्सा था, जबकि एनडीए का हिस्सा निर्वाचक मण्डल में 27.74 प्रतिशत था, जबकि अन्य का हिस्सा 30.39 प्रतिशत था, जिसमें एसपी 6.26 प्रतिशत, बीएसपी 3.98 प्रतिशत, बीजेडी 2.75 प्रतिशत एवं लेफ्ट 4.75 प्रतिशत शामिल थे। इसलिए इतना तो तय था कि यूपीए का पसंदीदा उम्मीदवार ही अगला राष्ट्रपति होगा, पर इस पद पर कौनसा शख्स आसीन होगा? यह तय नहीं था।[46]

राजनीतिक अटकलों और खींचतान के बीच भारतीय जनता पार्टी ने स्वीकार किया कि राष्ट्रपति चुनाव को लेकर वह एनडीए के दो घटकों क्रमशः शिवसेना और जनता दल (यू) को राष्ट्रपति पद के उम्मीदवार के नाम को लेकर नहीं मना पाई थी। एनडीए ने इस पद हेतु पी. ए. संगमा को उम्मीदवार बनाया था। पी. ए. संगमा का नाम नवीन पटनायक और जयललिता ने प्रस्तावित किया था। इधर विपक्ष की नेता सुषमा स्वराज ने कहा कि हमारे पास दो विकल्प क्रमशः ए.पी.जे. अब्दुल कलाम और पी. ए. संगमा के थे, जब कलाम साहब ने खुद को राष्ट्रपति पद की दौड़ से बाहर बताया, तो एनडीए ने पी. ए. संगमा को अपना अधिकृत उम्मीदवार घोषित कर दिया। एनडीए ने सत्तापक्ष यूपीए पर आरोप लगाया कि सत्तारूढ़ दल ने एनडीए की अनदेखी कर और बिना बातचीत के अपने उम्मीदवार प्रणव मुखर्जी के नाम की घोषणा कर दी, जो सर्वसम्मति की प्रथम शर्त का स्पष्ट उल्लंघन है। ऐसे में सत्तारूढ़ यूपीए की उनके उम्मीदवार प्रणव मुखर्जी को समर्थन देने की अपील उनके द्वारा स्वीकार्य नहीं होगी और फिर असफल हो चुके यूपीए के उम्मीदवार प्रणव मुखर्जी को स्वीकार कर उनके हाथ को मजबूत करने की उनकी कोई मंशा नहीं थी। प्रणव मुखर्जी को शिवसेना ने अपना समर्थन देने की बात की। इन चुनावों से इतना तो स्पष्ट हो गया कि 1977 में निर्विरोध निर्वाचित नीलम संजीव रेड्डी के अलावा अन्य कोई राष्ट्रपति निर्विरोध तभी निर्वाचित हो सकता था, जबकि सत्तारूढ़ दल अपना उम्मीदवार घोषित करने से पहले विपक्ष से बात कर आम सहमति बनाने के लिए प्रयास करता, एक बार फिर राष्ट्रपति का चुनाव दलीय राजनीति के दलदल में उलझकर रह गया।[47]

प्रणव मुखर्जी को निर्वाचक मण्डल के कुल मत मूल्य का 7,13,763 मत मूल्य प्राप्त हुआ, जबकि पी. ए. संगमा को 3,15,987 मत मूल्य प्राप्त हुआ, प्रणव दा की जीत में क्रॉस वोटिंग का भी योगदान रहा था। श्री प्रणव मुखर्जी भारत के **13वें** राष्ट्रपति बने। इन चुनावों में आंध्रप्रदेश की तेलगू देशम् पार्टी और तेलंगाना राष्ट्र विकास समिति ने मतदान की प्रक्रिया का बहिष्कार किया, जबकि असम, कर्नाटक, बिहार एवं हरियाणा के कुछ विधायकों ने भी मतदान प्रक्रिया का बहिष्कार किया।

2017 में राष्ट्रपति पद के लिए 17 जुलाई, 2017 को मतदान हुआ और 20 जुलाई, 2017 को काउंटिंग हुई थी, रामनाथ कोविद को 66 फीसदी बोट मिले, जबकि विपक्षी उम्मीदवार मीरा कुमार को 34 फीसदी वोट मिले, कोविंद ने निर्वाचक मण्डल के कुल मत मूल्य में से 7,02,044 मत मूल्य हासिल किया। राम नाथ कोविंद भारत के **14वें** राष्ट्रपति बने। इन चुनावों में जब रामनाथ कोविंद का नाम आया, तो विपक्ष ने मीरा कुमार को अपना उम्मीदवार बनाया। रामनाथ कोविंद को शिवसेना, अकाली दल और पीपुल्स डेमोक्रेटिक पार्टी, एआईएडीएमके के दोनों गुटों, तेलंगाना की तेलंगाना राष्ट्र समिति, ओडिशा की सत्तारूढ़ बीजू जनता दल और आंध्रप्रदेश की तेलगू देशम् पार्टी सहित कुछ अन्य क्षेत्रीय दलों का भी समर्थन प्राप्त हुआ, निर्वाचक मण्डल के 62.8 फीसदी वोट ही मिलने की उम्मीद कोविंद जी को थी, किंतु उन्हें निर्वाचक मण्डल के 66 फीसदी वोट हासिल हुए, जबकि पूर्व सांसद लोकसभाध्यक्ष मीरा कुमार को आरजेडी, झारखंड मुक्ति मोर्चा, टीएमसी सहित 35.8 फीसदी वोट मिलने की उम्मीद थी, लेकिन उन्हें उम्मीद से कम 34 फीसदी वोट ही हासिल हुए।[48]

विपक्षी दलों द्वारा मीरा कुमार को राष्ट्रपति पद हेतु अपना उम्मीदवार उनकी जाति, उनके राज्य और उनकी पार्टी के कारण बनाया गया। राष्ट्रीय जनतांत्रिक गठबंधन प्रत्याशी राम नाथ कोविंद को लेकर जब विपक्षियों में दरार आई, तो यूपीए घटक कांग्रेस ने मीरा कुमार को अपना प्रत्याशी चुना, ताकि जदयू को अपने पाले में फिर से लाया जा सके और बसपा उनसे अलग न हो, सत्तारूढ़ एनडीए ने उत्तरप्रदेश के एक दलित राम नाथ कोविंद को राष्ट्रपति पद हेतु अपना उम्मीदवार बनाया, जिसके

बाद जदयू ने सार्वजनिक रूप से यह बयान जारी किया कि वह कोविंद का समर्थन करेगी, जबकि बसपा ने कहा था कि वह किसी दलित की उम्मीदवारी को लेकर नकारात्मक रूख नहीं अपनाएगी। राकांपा अध्यक्ष शरद पंवार ने पूर्व गृहराज्य मंत्री सुशील कुमार शिंदे और योजना आयोग के पूर्व सदस्य भालचंद्र मुंगेकर का नाम प्रस्तावित किया, राजद प्रमुख लालू यादव ने मीरा कुमार का समर्थन करने की बात की, उन्होंने कहा कि एक तो वो बिहार की बेटी हैं और कांग्रेस की हैं और मीरा कुमार का नाम आगे आने से नीतिश कुमार को राम नाथ कोविंद का समर्थन करने के अपने फैसले पर पुनर्विचार के लिए बाधित होना पड़ेगा और मीरा कुमार भी दलित हैं और उनकी एक बेहतर राजनीतिक पृष्ठभूमि भी है। लालू यादव ने तत्कालीन बिहार के मुख्यमंत्री नीतिश कुमार से इस मुद्दे पर अपना मन बदलने की अपील की, और कहा कि वे ऐतिहासिक भूल न करें, वे अपने निर्णय पर पुनर्विचार अवश्य कर लें।[49]

2017 में राष्ट्रपति पद का चुनाव दलित बनाम दलित के रूप में चर्चित रहा। संविधान निर्माताओं की इच्छा को ताक में रखकर सत्तारूढ़ व विपक्ष राष्ट्रपति चुनाव को लेकर राजनीति करते रहे। राम नाथ कोविंद भी दलित जाति से आते थे, इसलिए उनके नाम को बीजेपी के दलित कार्ड के रूप में देखा जा रहा था। बीजेपी ने राष्ट्रपति पद का उम्मीदवार घोषित करने से पहले विपक्ष से राष्ट्रपति पद हेतु अपना समर्थन करने की बात कही थी, लेकिन उन्होंने अपनी तरफ से राष्ट्रपति पद हेतु उनका उम्मीदवार कौन होगा? उसका नाम नहीं बताया गया था, इसलिए विपक्ष इस पर सहमत नहीं हुआ, इसके बाद अचानक तत्कालीन बीजेपी अध्यक्ष अमित शाह जी ने राम नाथ कोविंद का नाम रख दिया। कोविंद कानुपर से थे और कोरी जाति के दलित थे। सत्तारूढ़ एनडीए ने यह सोचकर दलित कार्ड खेला कि दलित उम्मीदवार का विरोध करना विरोधियों के लिए आसान नहीं होगा, इसी कारण विपक्ष के सामने केवल दो ही रास्ते थे कि या तो वो कोविंद के नाम पर सहमत हो जाती या फिर दलित नाम का जवाब दलित नाम से ही देती। इसलिए दिवगंत दलित नेता बाबू जगजीवन राम की बेटी स्पीकर मीरा कुमार को यूपीए ने अपना उम्मीदवार बनाया, मीरा कुमार के नाम को लेकर टी.एम.सी और लेफ्ट पार्टियों ने अपनी असहमति जाहिर की थी, लेकिन कोविंद के नामांकन कार्यक्रम से एक दिन पहले ही मीरा कुमार को विपक्ष द्वारा अपना उम्मीदवार घोषित किया जा सका। जेडीयू ने कांग्रेस का साथ छोड़ दिया था, आम आदमी पार्टी ने यूपीए के उम्मीदवार को अपना समर्थन देने की घोषणा की। आगामी गुजरात, यूपी विधानसभा चुनाव में दलित वोट बैंक में सेंधमारी हेतु भी एनडीए द्वारा राम नाथ कोविंद को उम्मीदवार बनाया गया था। निर्वाचक मण्डल में यूपीए बहुमत में नहीं था, राम नाथ कोविंद की जीत निश्चित थी, लेकिन विपक्ष ने भी दलित उम्मीदवार उतारकर मुकाबला दलित बनाम दलित बना दिया। इस तरह **14वें** राष्ट्रपति का चुनाव जाति आधारित हो गया।[50]

ज्ञातव्य है कि **15वें** राष्ट्रपति चुनाव हेतु भाजपा की खोज झारखण्ड राज्यपाल द्रोपदी मुर्मु पर आकर रूक गई और विपक्ष ने इन चुनावों हेतु यशवंत सिन्हा को उम्मीदवार बनाया। दरअसल द्रोपदी आदिवासी समाज से संबंध रखती हैं और देश में 8.9 फीसदी अनुसूचित जनजाति के वोटर्स को यह संदेश दिया गया कि किसी आदिवासी को राज्यपाल के उपरांत राष्ट्रपति भी बनाया गया है। इसके अतिरिक्त देश के कई राज्यों की कई सीटों पर आदिवासी वोटर्स निर्णायक हैं। भाजपा ने द्रोपदी मुर्मू को राष्ट्रपति पद हेतु नामांकित कर अनुसूचित जनजाति के वोटर्स को अपनी ओर करने की कोशिश की है। किसी महिला को राष्ट्रपति पद हेतु उम्मीदवार बनाए जाने से महिलाओं में भी एक संकारात्मक संदेश गया कि भाजपा हर तबके की महिलाओं को ऊपर उठाना चाहती हैं, ऐसे में एक महिला को राष्ट्रपति पद पर पहुंचाने से भाजपा को महिला वोटर्स में अपनी पकड़ मजबूत करने में भी मदद मिली।

राष्ट्रपति चुनाव के बाद आने वाले 2 वर्षों में 18 राज्यों में चुनाव होने वाले थे, इनमें दक्षिण के 4 बड़े राज्य क्रमशः ओडिशा, कर्नाटक, आंध्रप्रदेश और तेलंगाना शामिल हैं, वहीं 5 राज्य ऐसे हैं जहां अनुसूचित जनजाति और आदिवासी वोटर्स की संख्या काफी अधिक है, इनमें झारखंड, छत्तीसगढ़, गुजरात, राजस्थान और महाराष्ट्र शामिल हैं। इन सभी राज्यों की 350 से ज्यादा सीटों पर मुर्मू फैक्टर भाजपा के लिए लाभकारी सिद्ध हो सकता था। अप्रेल–मई 2024 में लोकसभा चुनाव भी होने थे, देश में

47 लोकसभा और 487 विधानसभा सीटें अनुसूचित जनजाति के लिए आरक्षित हैं और इनसे भी कहीं अधिक सीटों पर इनका प्रभाव है। 2019 के लोकसभा चुनाव में आरक्षित 47 सीटों में से बीजेपी ने 31 पर जीत हासिल की, ऐसी ही कुछ विधानसभा सीटों पर भाजपा को हार का भी सामना करना पड़ा था। बीजेपी को आने वाले 2024 के लोकसभा चुनाव में अपनी साख को बनाये रखने के लिए ऐसे कदम को उठाने की आवश्यकता पड़ी।[51]

अमर उजाला ने अपने संपादकीय में पहले ही बता दिया था कि कोई आदिवासी राष्ट्रपति पद हेतु उम्मीदवार बन सकता है।[52] महात्मा गांधी के पोते गोपाल कृष्ण गांधी, एन.सी.पी नेता शरद पंवार और नेशनल कॉन्फ्रेंस के नेता फारूक अब्दुल्ला ने जब विपक्ष की ओर से राष्ट्रपति पद का उम्मीदवार बनने से इंकार किया, तो केन्द्रीय वित्तमंत्री रह चुके यशवंत सिंहा का नाम ममता बनर्जी ने आगे किया, जिसे एक साथ 19 विपक्षी दलों ने अपना समर्थन दिया।[53]

स्वयं यशवंत सिन्हा ने अपना नाम आगे आने के बाद कहा कि मुझे पार्टी से अलग हटकर विपक्षी एकता के लिए काम करना चाहिए, मुझे यकीन है कि पार्टी मेरे इस कदम को स्वीकार करेगी। 2021 में यशवंत सिंहा ने भाजपा छोड़कर टीएमसी की सदस्यता ले ली थी। अब सवाल यह उठता है कि यशवंत सिंहा ही क्यों? विपक्ष ने जिन बड़े नामों पर चर्चा की थी, उन सभी ने राष्ट्रपति पद पर चुनाव लड़ने से इंकार कर दिया था, ऐसे में विपक्ष के पास ज्यादा विकल्प नहीं थे और यदि विपक्ष द्वारा शीघ्र ही किसी नाम पर सहमति नहीं बनती, तो विपक्षी दलों में फूट पड़ने की संभावना दिखने लगी थी। इसके अतिरिक्त यशवंत सिन्हा बिहार से संबंध रखते थे, ऐसे में एनडीए कुनबे से जे.डी.यू का भी समर्थन मिल सकता था, यशवंत सिन्हा पुराने भाजपाई थे और इस समय वे मोदी के धुर विरोधी थे, ऐसे में वे एनडीए कुनबे में सेंधमारी कर सकते थे, यशवंत सिंहा के नाम से विपक्ष ने बीजेडी, वाइएसआर कांग्रेस, आम आदमी पार्टी और टी.आर.एस को भी विपक्षी पाले में लाने की कोशिश की, जो किस तरह जाएंगें यह अंतिम समय आने तक भी निश्चित नहीं हो पा रहा था, लेकिन इनका भी समर्थन मिलने की उम्मीद थी।[54] राष्ट्रपति चुनाव हेतु हुई राजनीति के बीच द्रोपदी मुर्मू को 64.03 प्रतिशत मत प्राप्त हुए और वे देश की **15वीं** और दूसरी महिला राष्ट्रपति चुनी गईं। द्रोपदी मुर्मू को 6,76,803 मत मूल्य के 2824 वोट प्राप्त हुए, जबकि श्री सिंहा को 3,80,177 मत मूल्य के 1877 वोट मिले।[55]

भारत के सभी राष्ट्रपतियों के निर्वाचन का अध्ययन करने के बाद हम इस निष्कर्ष पर पहुंचते हैं कि भारत में राष्ट्रपति चुनाव की प्रक्रिया दलीय राजनीति, धार्मिक और जातिगत राजनीति से परे नहीं है। निश्चित ही यह भारतीय राजनीतिक व्यवस्था के लिए उचित नहीं है। राष्ट्रपति का चुनाव महज औपचारिकता बनकर रह गया है क्योंकि संविधान निर्माता चाहते थे कि भारत के पहले नागरिक का चुनाव निष्पक्ष ढंग से और पूर्ण सहमति से हो, लेकिन ऐसा संभव नहीं हो सका। इसके अतिरिक्त "आज्ञाकारी राष्ट्रपति" की अवधारणा का चलन भारतीय राजनीतिक व्यवस्था में हो गया है, लेकिन उप–राष्ट्रपति को राष्ट्रपति को बनाए जाने की स्वस्थ परम्परा का विकास नहीं हो पाया है, जो भारतीय राजनीतिक व्यवस्था के लिए शुभ संकेत नहीं है।

संदर्भ

1. संसदीय शासन प्रणाली लोकतांत्रिक शासन का एक रूप है, इसमें कार्यपालिका, विधायिका के निम्न सदन के प्रति जवाबदेह होती है, कार्यपालिका और विधायिका एक–दूसरे से जुड़े हुए होते है। भारत एक संसदीय शासन प्रणाली वाला देश है।

2. संसदीय शासन प्रणाली में राष्ट्रपति देश का प्रथम नागरिक होता है।

3. 1967 को भारतीय राजनीति में महान् विभाजक वर्ष माना जाता है, क्योंकि इस वर्ष हुए लोकसभा चुनावों को कांग्रेस ने नेहरू के नेतृत्व के बिना और इंदिरा की अविश्सनीयता के बीच लड़ा, जिससे कांग्रेस की लोकप्रियता को आघात पहुंचा, भारतीय मतदाताओं ने देश को अस्थिरता की

दिशा में धकेलने की बजाए कांग्रेस को केन्द्र में तो सत्ता दी, लेकिन 17 में से 8 राज्यों में सबक सिखाकर सत्ता कांग्रेस के विरोधियों को सौंपी। इस वर्ष गैर–कांग्रेसवाद का डॉ. राम मनोहर लोहिया ने नारा बुलंद किया।

4. 1978 में जनता पार्टी की सरकार ने 42वें संविधान संशोधन अधिनियम 1976 के माध्यम से लाए गए विभिन्न संदिग्ध संशोधनों को पूर्णतया परिवर्तित करने के लिए 44 वें संशोधन अधिनियम को अधिनियमित किया।

5. भारत में केन्द्रीय मंत्रिमण्डल ने लाभ का पद संबंधी विधेयक बिना किसी बदलाव के दोबारा संसद में प्रस्तुत किया। बिल को संसद ने उसी रूप में दुबारा प्रस्तुत किया, जिस रूप में उसे राष्ट्रपति ने लौटाया था, बाद में 17 अगस्त 2006 को राष्ट्रपति ने लाभ के पद बिल को हस्ताक्षरित किया।

6. राष्ट्रपति को भारतीय संविधान के भाग 18 के अनुच्छेद 352, 356, 360 के तहत आपातकालीन शक्तियां प्राप्त हैं।

7. भारतीय संविधान के अनुच्छेद 54 में उल्लेखित है कि राष्ट्रपति का निर्वाचन एक निर्वाचक मण्डल द्वारा किया जाता है, जिसमें संसद के दोनों सदनों के निर्वाचित सदस्य व राज्यों की विधान सभाओं एवं साथ ही राष्ट्रीय राजधानी दिल्ली क्षेत्र तथा संघशासित क्षेत्र पदुचेरी के निर्वाचित सदस्य भी सम्मिलित होते हैं।

8. भारत के संविधान का निर्माण 26 नवंबर, 1949 को हुआ, किंतु उसे 26 जनवरी, 1950 को लागू किया गया।

9. के. टी. शाह बिहार से भारतीय संविधान सभा के लिए चुने गए थे और वे मौलिक अधिकारों पर सलाहकार समिति और उप–समिति के सदस्य थे, शाह ने संविधान में 'धर्मनिरपेक्ष' शब्द को शामिल करवाने के लिए दो बार प्रयास किए थे, लेकिन दोनों बार ही असफल हुए, शाह राष्ट्रपति चुनाव में डॉ. राजेन्द्र प्रसाद के सामने प्रमुख प्रतिद्वंद्वी थे।

10. सियासी तौर पर सक्रिय कोलकाता के कृष्ण कुमार चटर्जी को पहले राष्ट्रपति चुनाव में 533 मत मूल्य प्राप्त हुआ और वे पराजित हुए।

11. निर्दलीय उम्मीदवार लक्ष्मण थाटे हिंदू महासभा से जुड़े हुए थे, 1970 के दशक में उन्होंने सिर्फ इसलिए सिक्ख धर्म आत्मसात कर लिया था, ताकि उन्हें कृपाण लेकर चलने की इजाजत मिल जाए, सिक्ख धर्म को अपनाने के बाद उन्होंने अपना नाम करतार सिंह थाटे रख लिया था।

12. रोहतक हरियाणा के रहने वाले चौधरी हरिराम पहले राष्ट्रपति चुनाव में तीसरे नंबर पर रहे, इसके बाद भी उन्होंने राष्ट्रपति चुनाव लड़ा, लेकिन जीत हासिल नहीं कर पाए।

13. प्रथम राष्ट्रपति चुनाव में वामपंथी दलों ने संविधान सभा के सदस्य के. टी. शाह को उम्मीदवार बनाया था, जो डॉ. राजेन्द्र प्रसाद के सबसे मुख्य प्रतिद्वंद्वी थे।

14. डॉ. राजेन्द्र प्रसाद 1950 में संविधान लागू होते ही अंतरिम एवं 1952 व 1957में अधिकतम तीन बार भारतीय गणराज्य के राष्ट्रपति बने।

15. संजय श्रीवास्तव, न्यूज 18 हिंदी. कॉम, 13 जून, 2022.

16. भारत के प्रथम राष्ट्रपति डॉ. प्रसाद और प्रधानमंत्री नेहरू जी के बीच कई मुद्दो पर मतभेद थे, इन मुद्दों में डॉ. प्रसाद का सोमनाथ मंदिर के पुनर्निर्माण समारोह में भाग लेना, 1952 में डॉ. प्रसाद द्वारा बनारस की यात्रा के दौरान काशी के कुछ विद्वानों के पैर धोना, नेहरू द्वारा डॉ. प्रसाद के अनुसार

हिंदू कोड बिल पर जनता की राय न लेना, राष्ट्रपति के अधिकारों से जुड़े सवाल, जिसमें डॉ. प्रसाद के अनुसार राष्ट्रपति के पास किसी विधेयक को स्वविवेक से उसकी स्वीकृति रोकने का अधिकार होना चाहिए। नेहरू की इच्छा के विरूद्ध प्रसाद द्वारा पटेल के अंतिम संस्कार में भाग लेना भी दोनों के पारस्परिक विवाद का एक कारण था।

17. वही, 15, 14 जून, 2022.

18. उपर्युक्त, 15 जून, 2022.

19. डॉ. जाकिर हुसैन का राष्ट्रपति पद पर रहते हुए 3 मई, 1969 को निधन हुआ, वे भारत के प्रथम मुस्लिम राष्ट्रपति थे।

20. डॉ. चिंतामणि द्वारकानाथ देशमुख उन विरले लोगों में से एक थे, जिन्होंने एक सिविल सेवा अधिकारी, रिजर्व बैंक के गवर्नर, वित्त मंत्री एवं एक जननेता के रूप में कार्य किया था, ईमानदार व्यक्तित्व के धनी इस नेता को वामपंथी दलों ने अपना उम्मीदवार बनाया, लेकिन वे चुनाव हार गए।

21. 12 नवंबर, 1969 को भारत की प्रधानमंत्री इंदिरा गांधी को पार्टी अनुशासन का उल्लंघन करने के कारण कांग्रेस पार्टी से निष्कासित कर दिया गया, पार्टी विभाजित हुई और इंदिरा गांधी ने एक प्रतिद्वंद्वी संगठन इंडियन नेशनल कांग्रेस रिक्विजिशनिस्ट की स्थापना की, जिसे कांग्रेस (आर) या इंडिकेट के नाम से जाना गया, कांग्रेस का दूसरा धड़ा कांग्रेस (ओ) कहलाया।

22. भारतीय संविधान के अनुच्छेद 55 (3) के अनुसार भारत में राष्ट्रपति का चुनाव एकल संक्रमणीय मत और आनुपातिक प्रतिनिधित्व पद्धति से होता है, जिसमें निर्वाचक मण्डल के सदस्यों को मत वरीयतानुसार 1, 2, 3, 4 देने का अधिकार होता है, प्रथम वरीयता के वोटों की गिनती के उपरांत यदि किसी भी उम्मीदवार को आधे से एक अधिक का निर्धारित कोटा प्राप्त नहीं होता है, तो दूसरी वरीयता की गिनती की जाकर चुनाव परिणाम निकाला जाता है। आनुपातिक प्रतिनिधित्व पद्धति का उपयोग सांसदों व विधायकों के मत के मूल्य में समानता व एकरूपता लाने के लिए किया जाता है।

23. डॉ.पुखराज जैन एवं बी. एल. फड़िया, भारतीय शासन एवं राजनीति (राज्यों की राजनीति सहित) साहित्य भवन पब्लिकेशन, 2007, पृ. 243–244.

24. अभिषेक पाण्डेय, 'राष्ट्रपति चुनाव, जिसने प्रधानमंत्री इंदिरा गांधी को पार्टी से निकलवाया' दैनिक भास्कर, 05 जुलाई, 2022.

25. दीपक वर्मा, "फखरूद्दीन अली को इंदिरा ने क्यों बनाया महामहिम?" नवभारत टाइम्स, 27 जून, 2022.

26. वाम दलों ने बंगाल से आने वाले त्रिदिब चौधरी को चुनाव मैदान में उतारा। चौधरी रिवॉल्यूशनरी सोशलिस्ट पार्टी से संबंधित थे।

27. संपादकीय, नई दुनिया, 3 जुलाई, 1974.

28. वहीं, उपर्युक्त 25.

29. 11 फरवरी, 1977 को राष्ट्रपति फखरूद्दीन अली अहमद की अचानक मृत्यु हो गई, वे भारत के दूसरे मुस्लिम राष्ट्रपति थे।

30. नीलम संजीव रेड्डी 1977 में निर्विरोध भारत के राष्ट्रपति बने। सर्वसम्मति से भारत के पहले राष्ट्रपति बने।

31. विपक्षी दलों द्वारा सर्वोच्च न्यायालय के भूतपूर्व न्यायाधीश श्री हंसराज खन्ना को उम्मीदवार बनाया गया। जस्टिस खन्ना वही शख्स थे, जिन्होंने आपातकाल के दौरान इंदिरा गांधी से टकराने की हिम्मत की थी।

32. इंडियन एक्सप्रेस, 26 जुलाई 1982.

33. 31 अक्टूबर, 1984 को इंदिरा गांधी के सिक्ख अंगरक्षकों ने इंदिरा द्वारा अमृतसर के स्वर्ण मंदिर में चलाए गए ऑपरेशन ब्लूस्टार के विरोध में इंदिरा गांधी की गोली मारकर हत्या कर दी।

34. संजय श्रीवास्तव, न्यूज 18 हिंदी, 24 जून 2022.

35. 13 जुलाई, 1987 को देश के 8वें राष्ट्रपति का निर्वाचन संपन्न हुआ था।

36. न्यूज 18 हिंदी 22 अगस्त, 2019.

37. 13 जुलाई, 1992 को भारत के नवें राष्ट्रपति का निर्वाचन हुआ, इस चुनाव में 4 प्रत्याशी चुनाव में उतरे, मुख्य मुकाबला डॉ. शंकरदयाल शर्मा और जी. जी. स्वेल के बीच रहा।

38. भारत के पूर्व प्रधानमंत्री राजीव गांधी की हत्या 21 मई, 1991 को तमिलनाडु के श्रीपेरंबुदूर में एक आत्मघाती मानवबम ने की।

39. चंद्रप्रकाश पाण्डेय, नवभारत टाइम्स 05 जुलाई, 2022.

40. दीपक वर्मा, 'किस्से राष्ट्रपति चुनाव के' नवभारत टाइम्स, 7 जुलाई, 2022.

41. राजस्थान पत्रिका, 10 जून, 2002.

42. वही, 40, 9 जुलाई, 2022.

43. अमर उजाला, 21 जुलाई, 2022.

44. बीबीसी हिंदी. कॉम, 14 जून, 2007.

45. उपर्युक्त वही, 25 जून 2007.

46. वही, 44, 8 मई, 2012.

47. उपर्युक्त, 21 जून, 2012.

48. नवभारत टाइम्स, 21 जुलाई, 2017.

49. न्यूज 18 हिंदी.कॉम, 23 जून, 2017.

50. जावेद अख्तर, रिपोर्ट, आज तक, 22 जून, 2017.

51. अमर उजाला, 22 जून, 2022.

52. संपादकीय, अमर उजाला 7 जून, 2022.

53. टाइम्स ऑफ इण्डिया, 20 जून, 2022.

54. वही, 51.

55. द हिन्दू 22 जुलाई, 2022.